International Journal of Humanities and Social Science Research
ISSN: 2455-2070
Impact Factor: RJIF 5.22
www.socialsciencejournal.in
Volume 4; Issue 6; November 2018; Page No. 70-72

रामचरितमानस व्याधिकीय समस्याऐं

डॉ0 पी0के0 शर्मा
अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, सेठ फूलचन्द बागला (पी.जी.) कालेज, हाथरस, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

व्याधिकीय समस्याऐं सामाजिक व्याधिकीय की ही परिचायक हैं जो समाज में अव्यवस्था दुरावस्था अशान्ति व असन्तुलन के फलस्वरूप अस्तित्व में आती हैं। जिनका आधार समाज में विघटनकारी प्रक्रियाऐं हैं। सामाजिक व्याधिकी सामाजिक विघटन या अव्यवस्था का ही अध्ययन है जो समाज की असामान्य या रोगग्रस्त अवस्था का बोध कराता है। 'व्याधिकी' शब्द अंग्रेजी शब्द 'Pathology' का हिन्दी रूपान्तर है। जिसका अर्थ चिकित्साशास्त्र में रोगों का अध्ययन है। इस प्रकार शाब्दिक दृष्टि से व्याधिकी का अर्थ रोगों का अध्ययन है। इस परिप्रेक्ष्य में सामाजिक व्याधिकी समाज रूपी शरीर के रोगों अर्थात् सामाजिक दुरावस्था एवं संक्रमणजनित समस्याओं का अध्ययन है।

समाजशास्त्री श्री जे. एल. गिलिन व जे. पी. गिलिन ने सामाजिक व्याधिकी की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए अपने ग्रन्थ 'Cultural Sociology' में कहा है कि सामाजिक व्याधिकी सम्पूर्ण सांस्कृतिक संश्लिष्टता में विभिन्न तत्वों के मध्य ऐसी गम्भीर अवस्था है जो समूहों के अस्तित्व को खतरा पहुँचाती है या इसके सदस्यों की मूलभूत इच्छाओं की पूर्ति में ऐसा गम्भीर हस्तक्षेप है जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक एकता नष्ट हो जाती है।[2]

उपरोक्त परिभाषा से स्पष्ट होता है कि समाज में संस्कृति के विभिन्न तत्व परिवार, धर्म, नैतिक मूल्य एवं मानदण्ड, परम्पराऐं आदि परस्पर सामजस्य करते हुए क्रियाशील रहते हैं। यदि इन सभी संश्लिष्ट तत्वो में से कोई एक या अधिक परस्पर संघर्षरत हो क्रियाशील रहते हैं तो सामाजिक सम्बन्धों में विचलन होने लगता है जिसक फलस्वरूस्प समाज में विघअन, प्रमापविहीनता आदि को अस्तित्व मिलने लगता है जो सामाजिक व्याधि समस्याओं का वाहक बन उसके सक्रमित करता है। सामाजिक व्याधिकी के अन्तर्गत इन्हीं व्याधिकीय समस्याओं का वस्तुनिष्ठ अध्ययन किया जाता है।

किसी भी समाज में यदि विघटनकारी प्रक्रियाऐं सक्रिय हैं– अर्थात् वैयक्ति, पारिवारिक विघटन के लक्षण हैं, अपराधी प्रवृत्तियों का प्राबल्य है अथवा प्रमापविहीनता की स्थिति है तो वह समाज स्वस्थ नहीं कहा जा सकता रोगों से ग्रसित होने के कारण विद्यमान समस्याऐं व्याधिकीय समस्याओं के रूप में समाज और व्यक्ति को प्रभावित करती रही हैं।

जिनके निवारण हेतु सामाजिक नीति और नियोजन पर विचार समाज वैज्ञानिक व अन्य समाजिक कार्य करता करते रहे हैं।

'रामचरितमानस' वर्णित समाज पर विचार करें तो वह स्वस्थ नहीं कहा जा सकता। उसके वर्ण्य में विघटनकारी प्रक्रियाऐं क्रियाशील हो सांस्कृतिक संश्लिष्टता को क्षतिग्रस्त–रोगग्रस्त करती प्रतीत होती हैं। पारिवारिक तनाव, मूल्यों से विचलन, प्रमाणविहीन आचरण, अपराधी प्रवृत्तियों का प्राबल्य आदि लक्षित होता है जो उसे व्याधिग्रस्त घोषित करता है।

कवि तुलसी ने अपनी अभिव्यक्ति में राम अवतार के समय की सामाजिक व्याधियों का जहॉ उल्लेख किया है वहॉ सृजनकालीन मुगलशासन के अधीन भारत की सामाजिक विषय परिस्थितियों का चित्रण भी किया है। आतंक, धर्म का ह्रास, मानव मूल्यों की शून्यता, मौन विचलन एवं अत्याचार आदि कालयता के रूप में व्यक्त हुए हैं। रामचरितमानस के वर्ण्य में सामाजिक व्याधियों – व्याधिकीय समस्याओं के पर्याप्त उदाहरण हैं। कवि तुलसी स्वयं इस तथ्य को उजागर करते हैं कि समाज में साधु और असाधु दोनों की विद्यमान रहते है। दुष्टों के पापों और अवगुणों, व्याधिग्रस्त कार्य व्यापारों तथा साधुओं के गुणों– सत्कार्यों की कथाऐं दोनों ही अपार और अथाह समुद्र हैं। इसी कारण उनके कुछ गुण और दोषों का वर्णन किया गया है–

खल अघ अगुन साधु गुन गाहा। उभय अपार उदधि अवगाहा'।।
तेहि ते कुछ गुन रोष बखाने। संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने।।[3]

खल प्रकृति के व्यक्ति कामी, क्रोधी, मद, लोभ से पूर्ण, निर्दय कपटी, कुटिलता, पाप कर्मरत मिथ्या भाषण, ईष्यालु आदि अवगुणों से मुक्त होते हैं।–

ऐसे व्यक्ति पर द्रोही, पराये धन का अपहरण करने वाले, परस्त्री आदि में आसक्त रहते हैं, पार्श्विक प्रवृति धारण करते हैं, मनुष्य रूप में साक्षात् सक्षम ही है–

पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपबाद।
ते नर पॉवर पापमय देह धरें मनुजाद।।[4]

ऐसे व्यक्तियों की उपस्थिति समाज को रूग्णता ही प्रदान करेंगी। तुलसी कहते हैं–

'अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेदद बिदूषक परधन स्वामी।।
विप्रद्रोह पर द्रोह विसेषा। दंभ कपट जिम धरे सुवेषा।।[5]

ऐसे व्यक्तियों के कपट व्यवहार, प्रमाप विहीन व्यवहार से समाज कका रोगगस्त होना स्वाभाविक ही है। राम अवतार से पूर्व पृथ्वी की दुरावस्था ही उसकी व्याकुलता का काररण है, वह संतापग्रस्त है–

'निज संताप सुनाएसि रोई। काहू तें कछु काज न होई।।'[6]

अनेक उदाहरण रामचरितमानस में हैं जिनका विश्लेषण विभिन्न व्याधिकी में विस्ले समस्या के अन्तर्गत किया गया है।

पारिवारिक विघटन

पारिवारिक विघटन सामाजिक विघटन का ही एक रूप है तथा एक

व्याधिकीय समस्या भी। परिवार में तनाव एवं संघर्षों की वृद्धि एवं पारिवारिक सम्बन्धों में विखराव या टूटन पारिवारिक अव्यवस्था का बोध कराती है। समाज की केन्द्रीय इकाई होने के कारण सम्पूर्ण सामाजिक व्यक्तित्व इस टूटन से प्रभावित हो अव्यवस्थित व अस्वस्थ होता है। फेयर चाइल्ड– ''सामाजिक व्याधिकी में पारिवारिक तनाव एवं संघर्ष को शामिल करते हैं– उनकी परिभाषा से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि सामाजिक व्याधिकी 'सामाजिक विघटन अथवा अव्यवस्था का अध्ययन है, जिसमें उन कारकों के आशय, व्यापकता, कारणों, परिणामों तथा निवारणों का विवेचन किया जाता है जो सामाजिक व्यवस्था को रोकते या कम रकते हैं तथा बुढ़ापा, अस्वास्थ्य, मानसिक दुर्बलता, पागलपन, अपराध, तलाक, वेश्यावृत्ति, पारिवारिक तनाव की वृद्धि करते हैं।''[7] में सभी किस न किसी प्रकार परिवार से सम्बन्धित हैं साथ ही उसकी रूग्णता के कारण व परिणाम भी।

पारिवारिक तनाव एवं संघर्ष की स्थिति में परिवार में एक मत्य का भंग होना, पारिवारिक कल्याण की अपेक्षा व्यक्तिगत आकांक्षाओं का प्राधान्य, सम्बन्धों में असन्तुलन व असामंजस्य की स्थिति लक्षित होती है। इलियट और मैरिल की दृष्टि में पारिवारिक तनाव किसी भी उस संघर्ष की स्थिति का बोध कराते हैं जो सदस्यों के मध्य विशेषतः पति–पत्नी के मध्य विपरीत धारणाऐं उत्पन्न करते हैं।''[8] पारिवारिक सम्बन्धों में तनाव एवं विसंगतियॉ सदस्यों में पारिवारिक निष्ठा का ह्रास करती है''[9] जिससे विघटन को प्रोत्साहन मिलता है। समाजशास्त्रीयों की दृष्टि में – पारिवारिक विघटन परिवार की निष्ठा एवं एकमत्य का भंग होना है, अक्सर पहले के सम्बन्धों का टूट जाना या पारिवारिक चेतना का समाप्त हो जाना तथा अनासक्ति का विकास है।''[10]

रामचरितमानस परिवार संस्था की आदर्श कार्य प्रणाली का अंकन करता है– पारिवारिक सम्बन्धों में स्नेह, प्रेम, त्याग, सहयोग आदि के साथ–साथ उसके प्रकार्यात्मक पक्ष का सकारात्मक स्वरूप लक्षित होता है। तुलसी इस मान्यता को प्रतिपादित करते हैं कि संगठित परिवार ही समाज को संगठित व व्यवस्थित बनाएरखने में सहायक हो सकता है। इस परिप्रेक्ष्य में वे एक विवाही परिवार के पक्षधर रहे–

'एक नारिव्रत रत सब झारी। ते मन बच क्रम पति हितकारी।।'[11]

इस सबके बावजूद भी रामचरित मानस में परिवार में तनाव, संघर्ष एवं विघटन के लक्षणों, उसके प्रभाव एवं परिणामों का चित्रण कवि तुलसी ने किया है। मन्थरा दासी को 'घरफोडी' की संज्ञा प्रदान करना इस ओर संकेत करता है– पारिवारिक विघटन की प्रक्रिया परिवारों में रही है। मन्थरा, कैकयी से कहती हैं–

'तुम्ह पूछहू मैं कहत डेराऊॅ। धरेहु मोर घरफोडी नाऊॅ।।[12]

अर्थात् तुमने पहले ही मेरा नाम घरफोडी रख दिया है। भूपति की कपट चतुराई की ओर इंगित करने पर कैकेयी मन्थरा को कहती है–

पुनि अस कबहुॅ कहसि घरफोरी'[13]

रामचरितमानस में जिस परिवार में विघटन है– सती के मिथ्या भाषण एवं पति आज्ञा का उल्लंघन करने पर शिवजी सती को त्याग देते हैं–

'संकर रूख अवलोकि भवानी। प्रभु मोहि तजेऊ हृदय अकुलानी।।[14]

परित्याग करने पर भी वे पति का अपमान सहन न कर पाने तथा पति द्वारा स्वीकार न किये जाने की स्थिति में अपने पिता दक्ष के यज्ञाग्नि में अपना शरीर भस्म कर देती हैं

'अस कहि जोग अगिनि तनु जारा।
भपद सकता मख हाहाकारा'।। [15]

राजा दशरथ के परिवार में विघटन के लक्षण प्रकट होते हैं जब कैकेयी राम के 14 वर्ष के बनवास व भरत के लिए राज्य मांगती हैं। परिवार की स्थिति कवि के शब्दों में–

'घर मसान परिजन जनु भूता। सुतहित मीत मनहुॅ जमदूता।।'[16]

घर, श्मसान, कुटुम्बी, भूतप्रेत और पुत्र, हितैषी और मित्र मानो यमदूत हैं– पारिवारिक सम्बन्धों में विखराव व टूटन का ही परिचायक हैं। राम वनगमन के पश्चात् परिवार की स्थिति–

'सचिव आगमनु सुनत सब बिकल भयउ रनिवासु।
भवनु भयंकरू लाग तेहि मानहुॅ प्रेतु निवास।।'[17]

परिवार में श्मशान की सी शान्ति – द्वैतीयकता एवं रिश्तों में ठण्डेपन का ही परिचायक है, दशरथ का दुखित हो प्राण त्याग पारिवारिक विघटन की चरम सीमा का परिचय देता है–

'राम–राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुवर विरहॅ राउ गयउ सुरधाम।।'[18]

परिवार ही नहीं पारिवारिक कलह से अयोध्यावासी सम्पूर्ण समाज की अवधि तक प्रगति से रामराज्य से वंचित रह जाता है।

सत्ता और सम्बन्धित अधिकार पारिवारिक कलह का आधार बनता है। वानरराज सुग्रीव का भाई बाली से उत्पीड़ित हो कहता है–

'रिपु सम मोहि मारेसि अति भारी।
हरि लीन्हेसि सर्वसु अरूनारी।।'[19]

कलियुग में भी पारिवारिक जीवन में तनाव, कलह, विचलन आदि पर्याप्त लक्षित होता है। कवि की यह अभिव्यक्ति इस तथ्य को उजागर करती है–

'कुलबंति निकारहि नारि सती। गृह असहिं चेरि निबेरि गती।।
सुतमानहिं मातुपिता जब लौ। अब लानन दीरव नहीं जब लौ।।
ससुरारि पिआरि लगी जब ते। रिपु रूप कुटुंब भरन तब ते।।'[20]

साथ ही–

'गुन मंदिर सुंदर पति लागी। भजहिं नारि पर पुरूष अभागी।।'[21]

परिवार व्याधिग्रस्त हो व्यक्ति और समाज को व्याधिग्रस्त बनाते है, ध्वनित होता है।

निष्कर्ष

1. सर्वजन हिताय एवं सर्वजन सुखाय की भावना पर आधारित समतामूलक समाजनीति का निर्माण समाज कल्याण का आधार है।

2. साहित्य सामाजिक पुनर्निर्माण का सार्थक अभिकरण है वह सामाजिक नीति और नियोजन का सम्प्रेषक, विश्लेषक, प्रेरक व कारक है।
3. साहित्यकार सामाजिक व्याधियों–बुराईयों एवं समस्याओं को प्रकाश में लाकर सामाजिक नीति एवं नियोजन को आधार व दिशा प्रदान करता है।
4. साहित्य समाज का गतिशील दर्पण है। वह मानव व्यवहार का नियामक निर्देशक व प्रमाणक है।

सन्दर्भ

1. Though pathology is essentially the study of disease and as such belongs to all departments of Medicine and surgery, it as generally accepted as that branch in which the fundamental aspects of disease are studied in the laboratory. Chambers encyclopaedia, voe.x P. 474
2. Social pathology, we means such serious malad justment between the various elements in the total cultural conbiguration as to endanger the survival of the group, or as seriously to interfere birth the satisfaction of the fundamental desires of its members with the result that che social chohesion. J.L. Gillian and J.P. Gillin: Cultural sociology, The macmillan co. New York, P. 740.
3. बा0का0 6/1–2
4. उ0का0 39
5. उ0का0 40/7–8
6. बा0का0 184/8
7. "A study of social disorganisation or malad Justment in whcih there is discussion of the meaning, extent causes, results and treatment of the factors that Prevent or reduce social adjustment and increase oldage, ill ill health, feeble fair child : Dictionary of Sociological terms, P. 287.
8. M.A. Flliott and F.E. Merrill: Social disorganization hon, Harker and Bros. New York, 1950, P. 385.
9. एस.आर. गुप्ता : आधुनिक परिवार : समस्याऐं और संक्रमण, सीता प्रकाशन हाथरस 1998 पृ0–74
10. 10- M.H. New Meyer: Social Change in Modern society, P. 189.
11. उ0का0 22/8
12. अयो0 का0 17/3
13. अयो0 का0 14/8
14. बा0का0 58/3
15. बा0का0 64/7
16. अयो0का0 83/7
17. अयो0का0 147
18. अयो0का0 155
19. कि0का0 6/4
20. उ0का0 101/1–3
21. उ0का0 99 (क)/4